(3) आप्तवचन ***(Authority)***

भरोसा करने योग्य व्यक्तियों, पुस्तकों आदि द्वारा कहे गये वचनों के आधार पर जो

Scanned with CamScanner

ज्ञान हमें प्राप्त होता है उसे आप्तवचन द्वारा प्राप्त ज्ञान कहा जाता है। यह ज्ञान हम अपने प्रयासों द्वारा अपनी ज्ञानेन्द्रियों या तर्कबुद्धि का प्रयोग कर नहीं, बल्कि दूसरों के द्वारा कहे गये वचनों या पुस्तकों में लिखी गई बातों के द्वारा प्राप्त करते हैं। वास्तव में यह संभव भी नहीं है कि हम समस्त ज्ञान अपने-आप अपने ज्ञानेन्द्रियों या बुद्धि का प्रयोग कर प्राप्त करें। जीवन बहुत छोटी है और उसकी तुलना में ज्ञान का भंडार असीम है। इसलिए विश्वास करना पड़ता है। इस प्रकार प्राप्त किया गया ज्ञान आप्तवचन द्वारा प्राप्त ज्ञान है। भारतीय परंपरा में इस शब्द-ज्ञान की संज्ञा दी गई है।

परन्तु क्या किसी का भी वचन अथवा किसी भी पुस्तक आदि में लिखी कोई बात आप्तवचन है ? स्पष्टतः इसका उत्तर होगा – 'नहीं'। किसी भी वचन को आप्तवचन मानकर उसकी सतयता को स्वीकार करने में कुछ सावधानियाँ बरतनी होंगी :—

(i) सबसे पहले तो हमें यह देखना होगा कि किसी भी बात को बोलने या लिखने वाला व्यक्ति सचमुच उस विषय का एक अधिकारी ज्ञाता है या नहीं, जिससे संबंधित कोई बात वह बोल या लिख रहा है। जब तक व्यक्ति को संबंधित विषय में आधिकारिकता (Authority) प्राप्त न हो अथवा जब तक उस विभाग में जाना-माना एक विशेषज्ञ वह न हो, तब तक उसकी कही या लिखी बातों को आप्तवचन की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता।

(ii) आप्तवचन की स्वीकार्यता इस बात पर भी निर्भर करती है कि संबंधित व्यक्ति द्वारा पहले कही गई अनेकों बातों को हमने जाँचोपरान्त सत्य पाया हो तथा उसके द्वारा कही जाने वाली बात -किसी ज्ञात सत्य का विरोधी न हो। दूसरे शब्दों में, किसी भी व्यक्ति की बातों को आपतवचन के रूप में तभी लिया जा सकता है जब आम धारणा में वह व्यक्ति भरोसेमन्द तथा विश्वासप्रद हो और इसके लिये प्रमुख कसौटी यह है कि उसकी पिछली बातें सत्य सिद्ध हुई हों।

(iii) आप्तवचन का संबंध सिर्फ उस व्यक्ति से ही नहीं है जो कोई बात बोलता या लिखता है पर उस बात से भी है जो वह बोलता या लिखता है। बात ऐसी होनी चाहिये कि यदि हम चाहें, यानी यदि हम आवश्यक समय दे सकें, आवश्यक साधन जुटा सकें और आवश्यक कष्ट उठा सकें, तो फिर अपने भी उस बात की सत्यता की जाँच कर सकें। यदि बात ही ऐसी हो जिसकी सत्यता की जाँच संबंधी उपायों या साधनों के बारे में हम सोच भी न सकें तो फिर ऐसी बात की सत्यता में विश्वास नहीं किया जा सकता और उसे एक ज्ञान के रूप में नहीं लिया जा सकता। उदाहरण के लिए, विज्ञान संबंधी अनेकों नियमों या सिद्धान्तों की सत्यता की जाँच करना किसी साधारण व्यक्ति के लिये आसान नही है, व्यावहारिक रूप में प्रायः असंभव भी है पर तार्किक रूप में असंभव नहीं है। ऐसा सोचा तो जा ही सकता है कि यदि किसी व्यक्ति को विषय संबंधी विशिष्ट तथा लम्बा प्रशिक्षण दिया जाय और सारे तकनीकी प्रयोगों में उसे पारंगत बनाया जाय तो फिर संबंधित नियम या सिद्धान्त की सत्यता की जाँच खुद कर सकता है। परन्तु यदि कोई कहे कि इस विश्व के पीछे एक ईश्वर है जो उसका पालन करता है तो फिर यह प्रतिज्ञप्ति ऐसी है कि हम आस्था के आधार पर ऐसा कहने वाले व्यक्ति या पुस्तक के प्रति श्रद्धा के आधार पर इसकी सत्यता में विश्वास कर ले सकते हैं, पर अपने लिये हम खुद नहीं जानते कि क्या करने से अथवा किस प्रकार हम इसकी सत्यता की जाँच कर सकते हैं।

Scanned with CamScanner

ऐसी बातों संबंधी जानकारी को आप्तवचन द्वारा प्राप्त ज्ञान की संज्ञा हम नहीं दे सकते।[1]

(iv) जहाँ अधिकारी व्यक्तियों के वचनों में आपस में ही मतभेद हो वहाँ तबतक प्रतीक्षा करनी चाहिये जब मतभेद वाले बिन्दु का आगे की जाँचों के द्वारा अन्तिम रूप से निराकरण होकर किसी एक की निश्चित सत्यता सिद्ध न हो जाय।

पर सारी सावधानियों के बावजूद यह तो मानकर ही चलना होगा कि आप्तवचन को एक प्राथमिक तथा मौलिक ज्ञाम-साधन केरूप में नहीं लिया जा सकता। आप्तवचन का अन्तिम आधार आप्तवचन ही नहीं होना चाहिये, बल्कि उसका अन्तिम आधार होना चाहिये साक्षात अनुभव या बौद्धि तर्क अथवा बल्कि दोनों के संयोग। हम किसी बात की सत्यता 'क' की आधिकारिकता के आधार पर स्वीकार कर सकते हैं, 'क' उस बात की सत्यता को 'ख' की आधिकारिकता के आधर पर स्वीकारकर सकता है तथा 'ख' 'ग' की आधिकारिकता के आधार पर। पर यह क्रम इसी रूप में चलता नहीं जायेगा। आधिकारिकता के इस क्रम में अन्त में एक ऐसा अधिकारी होना होगा जिसने उस बात की सत्यता का साक्षात् अनुभव किया हो तथा बुद्धि और तर्क के आधार पर भी इसे युक्तिसंगत और सत्य पाया हो।

ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट आभास मिलता है कि आप्तवचन ज्ञान का एक कमजोर साधन है। ऊपर हमने देखा है कि इसे ज्ञान के एक प्राथमिक, मौलिक अथवा स्वतंत्र साधन के रूप में नहीं लिया जा सकता। इसकी वैधता अथवा स्वीकार्यता ज्ञान के अन्य साधनों, जैसे प्रत्यक्ष तथा तर्कबुद्धि पर आधारित है। पर ठीक से विचारकरने पर हम पायेंगे कि यह कमजोरी कमोवेश अन्य साधनों में भी विद्यमान है। प्रत्यक्ष, जिसे सबसे अधिक प्राथमिक, आधिकारिक तथा स्वतंत्र साधन के रूप में लिया जाता है, उसमें भी यह कमजोरी है। प्रत्यक्ष ज्ञान में भी भ्रम की संभावना है और उसकी वैधता की भी जाँच कभी-कभी उसके अलावा किसी अन्य साधन के द्वारा जैसे तर्कानुमान आदि के द्वारा, करने की आवपश्यकता पड़ती है। कभी-कभी तो कहा जा सकता है कि खुद आप्तवचन प्रत्यक्षद्वारा उत्पन्न भ्रामक ज्ञान को दूर करने में सहायक होता है। उदाहरण के लिये प्रत्यक्ष के द्वारा तो हमें यह ज्ञान होता है कि पृथ्वी स्थिर है और सूर्य चलता है, पर यह यथार्थ ज्ञान कि पृथ्वी चलती है और सूर्य के चारों ओर घूमती है, हमें खगोलशास्त्री के आप्तवचन द्वारा प्राप्त होता है। इस प्रकार आप्तवचन की तुलना में यद्यपि प्रत्यक्ष अधिक मौलिक तथा स्वतंत्र ज्ञान का साधन है, पर यह भेद सिर्फ मात्रा का है, प्रकार का नहीं।

(iv) जहाँ अधिकारी व्यक्ति के वचनों में आपस में ही मतभेद हो वहाँ तबतक प्रतीक्षा करनी चाहिये जब मतभेद वाले बिन्दु का आगे की जाँचों के द्वारा अन्तिम रूप से निराकरण होकर किसी एक की निश्चित सत्यता सिद्ध न हो जाय।

पर सारी सावधानियों के बावजूद यह तो मानकर ही चलना होगा कि आप्तवचन को एक प्राथमिक तथा मौलिक ज्ञान-साधन के रूप में नहीं लिया जा सकता। आप्तवचन का

1. पर यह बिन्दु विवादास्पद हो सकता है। हमने जो दृष्टिकोण यहाँ रखा है उसे अनुभववाद की संज्ञा दी जा सकती है। पर जो लोग रहस्यवादी दृष्टिकोण रखते हैं अथवा जो धार्मिक अनुभूति आदि की वस्तुनिष्ठता में विश्वास रखते हैं वे शायद इस बिन्दु से सहमत नहीं होंगे। भारतीय परंपरा में ही वेद वाक्यों को (तथा शायद भगवद्गीता जैसे धर्मग्रन्थों के वाक्यों को भी) आप्तवचन के रूप में लिया जाता है और उन्हें यथार्थ ज्ञान का साधन माना जाता है, भले ही वे वाक्य उपर्युक्त कसौटी पर खरे नहीं उतरें।

Scanned with CamScanner

अन्तिम आधार आप्तवचन ही नहीं होना चाहिये, बल्कि उसका अन्तिम आधार होना चाहिये साक्षात अनुभव या बौद्धिक तर्क अथवा बल्कि दोनों के संयोग। हम किसी बात की सत्यता 'क' की आधिकारकिता के आधार पर स्वीकार कर सकते हैं, 'क' उस बात की सत्यता 'क' की आधिकारिकता के आधार पर। पर यह क्रम इसी रूप में चलता नहीं जायेगा। आधिकारिकता के इस क्रम में अन्त में एक ऐसा अधिकारी होना होगा। जिसने उस बात की सत्यता का साक्षात् अनुभव किया हो तथा बुद्धि और तर्क के आधार पर भी इसे युक्तिसंगत और सत्य पाया हो।

ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट आभास मिलता है कि आप्तवचन ज्ञान का एक कमजोर साधन है। ऊपर हमने देखा है कि इसे ज्ञान के एक प्राथमिक, मौलिक अथवा स्वतंत्र साधन के रूप में नहीं लिया जा सकता। इसकी वैधता अथवा स्वीकार्यता ज्ञान के अन्य साधनों, जैसे प्रत्यक्ष तथा तर्कबुद्धि पर आधारित है। पर ठीक से विचार करने पर हम पायेंगे कि यह कमजोरी कमोवेश अन्य साधनों में भी विद्यमान है। प्रत्यक्ष, जिसे सबसे अधिक प्राथमिक, आधिकारिक तथा स्वतंत्र साधन के रूप में लिया जाता है, उसमें भी यह कमजोरी है। प्रत्यक्ष ज्ञान में भी भ्रम की संभावना है और उसकी वैधता की भी जाँच कभी-कभी उसके अलावा किसी अन्य साधन के द्वारा जैसे तर्कानुमान आदि के द्वारा, करने की आवश्यकता पड़ती है। कभी-कभी तो कहा जा सकता हे कि खुद आप्तवचन प्रत्यक्ष द्वारा उत्पन्न भ्रामक ज्ञान को दूर करने में सहायक होता है। उदाहरण के लिए प्रत्यक्ष के द्वारा तो हमें यह ज्ञान होता है कि पृथ्वी स्थिर है और सूर्य चलता है, पर यह यथार्थ ज्ञान कि पृथ्वी चलती है और सूर्य के चारों ओर घूमती है, हमें खगोलशास्त्री के आप्तवचन द्वारा प्राप्त होता है। इस प्रकार आप्तवचन की तुलना में यद्यपि प्रत्यक्ष अधिक मौलिक तथा स्वतंत्र ज्ञान का साधन है, पर यह भेद सिर्फ मात्रा का है, प्रकार का नहीं।

कभी-कभी आप्तवाचन के विरुद्ध यह भी कहा जाता है कि जिन्हें हम आप्त या अधिकारी पुरुष मानते हैं उनमें प्रायः एक ही विषय को लेकर मतैक्य नहीं होता, उनमें आपस में मतभेद देखे जा सकते हैं। इससे आप्तवचन की विश्वसनीयता समाप्त हो जाती है। जैसा ***मॉन्टेग्यू*** *(Montague)* इस संबंध में कहते हैं – *"The weakness of the authoritarian method consists first in the fact that authorities conflict, and there is consequently an internal discrepancy in the method, which makes it difficult of application."*[1] पर यह कमजोरी या कठिनाइ सिर्फ आप्तवचन तक ही सीमित नहीं है, जैसा *मॉन्टेग्यू* खुद स्वीकार करते हैं। यह कठिनाई प्रत्यक्ष आदि अन्य ज्ञान के साधनों के साथ भी है, हाँ वहाँ इसकी मात्रा कम है, यानी प्रत्यक्ष, अनुमान जैसे ज्ञान-साधनों से प्राप्त ज्ञान में मतभेद की संभावना सापेक्षतः कम रहती है। जैसा ***मॉन्टेग्यू*** खुद कहते हैं – *This difficulty, however, is not peculiar to authoritarianism, it is present, though to less extent, in each of the other methods.*[2]

कुछ लोग तो उपर्युक्त कमजोरियों के कारण आप्तवचन को ज्ञान के साधन के रूप में लेने को तैयार ही नहीं होते। उन्हें लगता है कि आज के वैज्ञानिक युग में इस प्रकार

---

1. डब्ल्यू॰ पी॰ मॉन्टेग्यू (W. P. Montague), *दी वेज ऑफ नोविंग (The Ways of Knowing)* पृ॰ 391।
2. वहीं।

Scanned with CamScanner

के साधन की कोई उपयोगिता ही नहीं। पर ऐसा समझना भारी भूल है। हमने देखा है कि यदि आप्तवचन का सहारा हम न लें तो ज्ञान के एक बहुत बड़े क्षेत्र के संबंध में हम अनभिज्ञ ही रह जायेंगे। 'आप्तवचन' यथार्थ ज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण और उपयोगी साधन तो है ही, चूँकि इसके द्वारा हमें अनेकों ऐसी प्रतिज्ञप्तियों की सत्यता का ज्ञान होता है जिसका ज्ञान हम खुद अपने प्रत्यक्ष तथा अनुमान के द्वारा शायद ही प्राप्त कर सकते थे। यह एक अलग बात है कि इसके द्वारा प्राप्त ज्ञान स्वतः प्रामाणय नहीं है, यानी उसकी वैधता की जाँच ज्ञान के किसी अन्य साधन के द्वारा होती है।

Scanned with CamScanner